**International Journal of Multidisciplinary Education and Research**
**ISSN: 2455-4588; Impact Factor: RJIF 5.12**
**Received: 06-02-2020; Accepted: 07-03-2020; Published: 08-04-2020**
**www.educationjournal.in**
**Volume 5; Issue 2; 2020; Page No. 21-25**

# समकालीन हिंदी उपन्यासों में पर्यावरण विमर्श

**डॉ० प्रीति अग्रवाल**
Post-Doctoral fellow PGDAV Delhi University Delhi, Delhi, India

**प्रस्तावना**

प्रकृति और मानव का शाश्वत संबंध है। यह कब बना यह किसी को पता नहीं। मानव ने प्रकृति की गोद में जन्म लिया और उसी के द्वारा प्रदान किए गए पदार्थों को ग्रहण करके मानव बडा हुआ। पर्यावरण शब्द 'परि' और 'आवरण' शब्दों का युग्म है। परी का अर्थ है 'चारों तरफ' तथा आवरण का अर्थ है 'घेरा'। प्रकृति के चारों तरफ हम जो कुछ भी देखते हैं – वायु, पेड़ पौधे, जल, प्राणी, आकाश और मिट्टी यह सभी पर्यावरण के अंग हैं। पर्यावरण में एक तरह का संतुलन है जिसके कारण मानव इस धरती पर सुरक्षित रह सकता है। पर्यावरण के अंदर जल, वायु, पेड़–पौधे, जीव–जंतु सब सम्मिलित हैं। इन सब के बीच होने वाली विभिन्न क्रियाओं के कारण हमारे पर्यावरण का संतुलन बिगड़ रहा है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि पर्यावरण हमारा रक्षा कवच है। पर्यावरण के बिना मनुष्य एक पल के लिए भी जीवित नहीं रह सकता। स्वच्छ जल के बिना हम व्यक्ति की कल्पना भी नहीं कर सकते। गांधी जी ने कहा है –

**"(1) प्रकृति के भंडार में हर किसी की जरूरतें पूरी करने को यथेष्ट संसाधन हैं पर किसी भी लालच को पूरा करने में असमर्थ है। (1)"**

साहित्य और प्रकृति का संबंध भी पुराना है। वाल्मीकि काव्य सृजन की प्रेरणा क्रोंच जोड़े को देखकर मिली। कालिदास के संपूर्ण साहित्य में प्रकृति का महत्वपूर्ण स्थान है। छायावाद में प्रकृति के सुंदर चित्र बिखरे पड़े हैं। पर्यावरण का एक बड़ा और प्रमुख हिस्सा है पेड़ पौधे। वनों का सबसे बड़ा योगदान यह है कि वह कार्बन डाइऑक्साइड को ग्रहण करके जीवनदायी ऑक्सीजन को वातावरण में छोड़ते हैं। मनुष्य इसी गैस के कारण धरती पर जीवित रह सकता है। यही वृक्ष वातावरण की नमी, तापमान आदि का भी संतुलन बनाए रखते हैं। वृक्षों का जो पानी भाप बनकर ऊपर आकाश में जाकर बादल बनता है उसी से वर्षा होने के कारण धरती की प्यास बुझती है। वृक्ष अपनी जड़ों से भूमि को बांध लेते हैं और पानी कम बहाव से बहता है हमारे वनों में ही जीव जंतु सरलता से जीवित रह पाते हैं। वायु भी पर्यावरण का एक हिस्सा है।

धरती से करीब 23 से 20 मीटर की ऊंचाई पर ओजोन परत है। यह सूरज से आने वाली अल्ट्रावायलेट किरणों को धरती पर आने से रोकती है। यह किरणें अन्यथा अनेक भीषण बीमारियां पैदा कर सकती है। परंतु आज मनुष्य अपने स्वार्थ के कारण पर्यावरण का संतुलन लगातार बिगाड़ता चला जा रहा है। आज के लोलुप और स्वार्थी अधिकारी अपनी जेबों को भरने के लिए पर्यावरण से निरंतर खिलवाड़ कर रहे हैं। आज पहाड़ों पर वनों में वृक्षों की संख्या कम होती जा रही है। इसके कारण पर्यावरण का संतुलन बिगड़ता जा रहा है। मनुष्य ने विज्ञान की उन्नति के कारण विभिन्न प्रकार के वाहनों, मशीनों आदि का ईजाद किया परंतु इसके कारण चारों तरफ प्रदूषण बढ़ता जा रहा है इसी के कारण ओजोन परत में भी एक छेद हो गया है तथा इससे मानव जाति को धरती पर खतरा है। पर्यावरण को लेकर जो आधुनिक चिंतन हुआ है उसको विस्तार हिंदी साहित्य में भी प्राप्त हुआ है। समकालीन उपन्यासों में भी इन समस्याओं पर विचार विमर्श हुआ है। समकालीन हिंदी उपन्यासों में भी उपन्यासकारों ने ऐसे उपन्यास लिखे हैं जो पर्यावरण चिंतन संबंधी आधुनिक प्रश्नों को उठाते है। भगवती शरण मिश्र का उपन्यास 'लक्ष्मण रेखा', नासिरा शर्मा का उपन्यास 'कुइयां जान', शांता कुमार का उपन्यास 'वृंदा', महुआ माझी का उपन्यास 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' अभिमन्यू, अनत का उपन्यास 'एक उम्मीद और' कुसुम कुमार का उपन्यास 'मीठी नीम' आदि उपन्यासों में पर्यावरण को लेकर गंभीर चिंतन दिखता है।

संपूर्ण विश्व के सामने 'पर्यावरण असंतुलन' एक प्रमुख समस्या है। वी. एन. एवं जनमेजय सिंह लिखते हैं कि –

**"(2) आधुनिक भौतिकतावादी संस्कृति और सभ्यता के विकास ने देश की संपदा में वृद्धि की है। औद्योगीकरण, नगरीकरण, यंत्रीकरण की प्रगति के साथ साथ विशालकाय मिल, फैक्ट्री कारखाने भी स्थापित हुए हैं। कृषि में विज्ञान का प्रवेश हुआ, है। वैज्ञानिक ढंग से खेती करने के कार्य में वृद्धि हुई। इन सबने मिलकर प्राकृतिक पर्यावरण को नष्ट–भ्रष्ट कर दिया। (2)"**

नासिरा शर्मा के उपन्यास 'कुइयाँजान' को नामवर सिंह ने 2005 का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास कहा है। यह उपन्यास मुख्यतः जल समस्या पर आधारित है। आरंभ में ही नासिरा शर्मा पानी की किल्लत का चित्रण करते हुए लिखती हैं –

**"(3) मोहल्ले के कुएं वर्षों पहले पाट दिए गए थे। एक दो घरों में हैंडपंप थे जो खराब पड़े थे। मस्जिद वाली गली से मिली अंदर से पतली गली थी। वहां पक्के बड़े–बड़े घर थे। उनके यहां भी पानी की हाय तौबा मची थी। शिव मंदिर के पुजारी भी बिना नहाए परेशान बैठे थे। उन्होंने न मंदिर धोया था, न भगवान को भोग लगाया था। उनके सारे गगरे–लोटे खाली पड़े थे। नल की टोटी पर कई बार कौवा पानी की तलाश में आकर बैठ–उड़ चुका था। गर्मी ऐसी कि पसीना पानी की तरह शरीर से बह रहा था। (3)"**

आज हमारा देश पानी की गंभीर किल्लत का सामना कर रहा है। 2030 में देश में पानी की मांग उपलब्ध जल वितरण से दोगुनी हो जाएगी। करीब दो लाख लोग स्वच्छ पानी न मिलने पर हर साल जान से हाथ धो बैठते हैं। भविष्य में करोड़ों लोगों के लिए पानी का गंभीर संकट पैदा हो जाएगा। यह उपन्यास हमारे समक्ष अनेक सवाल खड़े करता है। भारत में पानी की समस्या से निपटने के लिए हमें मौजूदा जल संकट की बुनियादी वजह को समझना होगा। सच यही है कि सरकार की अनदेखी गलत आदतों और जल संसाधनों के दुरुपयोग की वजह से ही यह जल संकट इतने विकट रूप में हमारे सामने खड़ा है। लेखिका ने यह भी दिखाया है कि जहां एक और पानी का

जलस्तर नीचे चला गया है वहीं दूसरी ओर कई जगह पानी पीने योग्य भी नहीं रह गया है। लेखिका कहती हैं –

**"(4) कई जिलों में पानी की जांच से पता चला है कि नलकूप से आने वाला पानी पीने योग्य नहीं है। भोजपुर जिले में आरसेनिक (सांखिया) की मात्रा बहुत अधिक पाई गई है जिसका सेवन स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकारक है। अब सारे नलकूप सील कर दिए गए हैं और उस इलाके में टैंकर की सहायता से जनता को सरकार जल उपलब्ध करवा रही है। (4)"**

यह समस्या एक छोटे से क्षेत्र की नहीं है बल्कि संपूर्ण भारत की है। धीरे–धीरे तालाब, पोखर, जलाशय खत्म होते जा रहे हैं। कुइयांजान में उपन्यासकारा ने अलग–अलग चेहरों को पानी के बहाने आपस में जोड़ा है। कहानी का मुख्य पात्र है रसूखदार मुस्लिम परिवार का एक युवा डॉक्टर जो जल संरक्षण से जुड़ी राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय परिचर्चाओं में भाग लेता है। वह और उसकी पत्नी पानी की समस्या को लेकर चिंतित हैं। कुइयांजान का अर्थ है कुंआ जिसका पानी पोषण देता है, जीवन देता है। जब तक सामान्यजन जल संरक्षण का महत्व नहीं समझेगा तब तक हम परिवर्तन नहीं ला सकते। उपन्यासकारा ने लिखा है कि फराका बांध से भी बांग्लादेश में अनेक समस्याओं ने जन्म लिया है –

**"(5) इस बैराज के बनने से बांग्लादेश के कुटिया सहित सात आठ जिलों में जलस्तर काफी नीचे चला गया। जिसके कारण पेड़ पौधों पर बहुत बुरा असर पड़ा। जमीन का लवण भी जल के साथ काफी नीचे चला गया। सुंदरी पेड़ जिसकी हमारे यहां बहुतायत थी, जिसके कारण जंगल का नाम सुंदरवन पड़ा, वह पेड़ अब खोजने से ही नजर आते हैं। वही हाल मछलियों का हुआ। प्रवासी पक्षियों के आगमन पर असर हुआ। (5)"**

पृथ्वी का बढ़ता तापमान, असंतुलित पर्यावरण, बहुराष्ट्रीय कंपनियों का फैलाव, जल की भविष्य में भीषण कमी की ओर लेखिका सबका ध्यान आकर्षित करना चाहती हैं। पर्यावरण से खिलवाड़ कर हम एक प्यासे समय को आमंत्रित कर रहे हैं। लेखिका कहती हैं –

''(6) जाओ देखो घने जंगलों को जो तुमने काट दिए, जाओ ढूंढो जीवों को जो तुम्हारी गोली से नापैद होते जा रहे हैं, जाओ देखो उस जमीन को जिसके स्तनों को तुमने निचोड़ लिया और अपनी सत्ता दिखाने के लिए उस पर परमाणु बमों का प्रयोग किया, जाओ देखो उसकी तपती परतों को और उसकी साजिश का अंदाजा लगाओ कि वह किस तकलीफ से दो चार है। उन पर्वतों को देखो जिन्हें तोड़कर उड़ाकर तुमने अपनी इच्छाएं पूरी की। हिमशिखरों को देखो जिन्होंने अपने वजूत को पिघलाकर तुम्हें नदियॉ दी और तुमने उन्हें बर्बाद कर दिया। यही नदियां थीं जिनके किनारे तुम आकर बसे थे आज तुम उनसे मुंह मोड़ चुके तुम स्वार्थी हो। उपन्यास की भूमिका में लेखिका लिखती हैं –

**"(7) आधुनिक टेक्नोलॉजी में मनुष्य ने उस मूल स्रोत को आदिम करार दे दिया है और अपनी मशीनी ताकत के बल पर प्रकृति के इस अक्षय स्रोत 'जल' से खिलवाड़ कर रहा है जिसका परिणाम यह है कि अपार जन संपदा होते हुए भी हम आज प्यासे तड़पने को विवश हो रहे हैं। विशेषज्ञों ने लाख चेतावनी दी है जिस तरह आज हम इस प्राकृतिक वरदान जलसंपदा को नष्ट कर रहे हैं उसके कारण वह दिन दूर नहीं जब पानी को लेकर विश्व एक और महायुद्ध की दहलीज पर खड़ा होगा। (7)"**

भारत में विभिन्न हिस्सों और इलाकों में पानी को लेकर क्या–क्या तकलीफें है यह उपन्यास उसका सजीव चित्र प्रस्तुत करता है। धरती से पीने का पानी ना निकलना समस्या की विकरालता को स्पष्ट करता है। रासायनिक तत्व पानी के सहारे धरती में पहुंचकर पानी में मिलकर पानी को जहरीला बना रहे हैं। प्राकृतिक झरनों, नदियों, नहरों को हमें ऐसे रसायनकों से बचाना होगा तभी हम राजस्थान जैसी पानी की समस्या से बच सकते हैं। भगवतीशरण मिश्र का उपन्यास 'लक्ष्मण रेखा' पर्यावरण की समस्या पर आधारित है। प्राचीन काल में प्रकृति के किसी भी अवयव को क्षति पहुंचाना पाप समझा जाता था। बढ़ती जनसंख्या एवं भौतिक विकास के फलस्वरुप प्रकृति का असीमित दोहन प्रारंभ हुआ। भूमि से अपार खनिज संपदा डीजल, पेट्रोल आदि निकाल कर धरती की कोख को उजाड़ दिया। वृक्षों को काटकर हमने धरती को नग्न कर दिया, असीमित औद्योगीकरण के कारण वायुमंडल विषाक्त बन गया है। हमारी पावन नदियॉ गंदे नाले का रूप लेती जा रही है। पर्यावरण प्रदूषण आज मानव सभ्यता के अस्तित्व को चुनौती दे रहा है । लेखक ने उपन्यास में यही दिखाया है कि झील, नदी, पहाड़ी, वन और समाज सभी पर प्रदूषण का काला साया मॅडरा रहा है। हम अपनी लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन कर बैठे हैं और उसके भीषण परिणाम हमारे सामने हैं। लेखक ने भूमिका में लिखा है –

**"(8) कितना धुआँ उगलोगे अपने वाहनों से, फैक्ट्रियों से, रॉकेट से, यहां भी तो कोई लक्ष्मण रेखा होनी चाहिए कि नहीं? कितने गंदे नालों का मुंह खोलेगे, कितना कचरा उगलोगे अपने कारखानों से, गंगा यमुना और अन्य नदियों के पेट में? कितना अपेय बनाओगे पेयजल को? कोई लक्ष्मण रेखा तो होनी चाहिए यहां भी? और वन? तुम्हारे प्राण रक्षक? तुम्हारे फेफड़ों में निरंतर प्राणवायु फूंकने वाले? तुम्हें शीतलता और शरणस्थली से लेकर फल–फूल के रूप में उदर पूर्ति का साधन बनने वाले? आदिवासियों, वनवासियों, गिरीजनों के अस्तित्व, उनकी संस्कृति के भी पोषक और प्रतीक? कब तक काटोगे इन्हें कितना और कहां तक? कोई लक्ष्मण रेखा खींचोगे कि नहीं, जो प्रकृति के साथ तुम्हारे इस विवेकहीन व्यवहार पर अंकुश दे? (8)"**

उपन्यासकार ने गीतिका और विश्वंभर के संवादों के माध्यम से नैनीताल की झील में आने वाले भयानक परिवर्तन को दर्शाते हुए लिखा है –

**"(9) तुम ही जाओ बैठो उस झील के पानी में मुझे उबकाई आती है। और जानती हो इसी झील से पूरे नैनीताल को पानी पिलाते हैं और उसके लिए जल शोधन के क्रम में पडने वाली क्रोमीन की मात्रा वर्ष प्रतिवर्ष बढ़ती ही जा रही है। अब तो यह पानी इस दवा से इतना प्रदूषित हो गया है कि हम समतल–वासियों को यह रास ही नहीं आता। (9)"**

विश्वंभर के माध्यम से लेखक ने दिखाया है नैनीताल में झील की गंदगी विश्वंभर को परेशान करती है। वह महसूस करता है कि झील की हालत नाजुक है। झील में प्रदूषण का स्तर अपनी लक्ष्मण रेखा पार कर गया है। नदियों का सवाल प्रकृति और पर्यावरण से जुड़ा है। घरों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों और गंदे नालों के झीलों में मिलने के कारण झील दिन–प्रतिदिन और प्रदूषित होती जा रही है। मानव की अस्थियां, अवशेषों के नदियों में प्रवाहित किए जाने के कारण भी जल प्रदूषित हो गई है। आज हम इस बात से इनकार नहीं कर सकते कि पर्यावरण, जलवायु संरक्षण विश्व भर के लिए चिंता का विषय बने हुए हैं। लेखक ने इस उपन्यास में पर्यटकों द्वारा फैलाए गए प्राकृतिक प्रदूषण और उसके दुष्परिणामों पर भी प्रकाश डाला है।

हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री शांता कुमार ने अपने उपन्यास 'वृंदा' में बड़े ही खूबसूरत ढंग से एक आंचलिक प्रेम कथा में पर्यावरण की चिंता को गूंथा है। लेखक ने उपन्यास की भूमिका में लिखा है –

**"(10) दो–तीन बार प्रदेश में कुछ स्थानों पर भयंकर वर्षा हुई। उसे अब 'बादल फटना' कहने लगे हैं। एकदम अचानक पानी बहा कि पूरे का पूरा गांव उसकी लपेट में आ गया। मैं देखने गया। उस सर्वनाश को देखकर दिल दहल गया था। पानी के बहाव में तीन मंजिलें पक्के मकान नींव से उखाड़ कर कहीं दूर बिखरे पड़े थे। टनों वजन वाले पत्थर दीवारें तोड़कर कहीं के कहीं पहुंच गए थे। उस दृश्य को देखकर यह सोच पाना कठिन था कि दो ही दिन पहले वहां हंसता खेलता गांव बसा था। मिट्टी व पत्थर मिले पानी के तेज बहाव के तूफान ने देखते–देखते पूरे गांव को श्मशान बना दिया था। बातचीत में कुछ वृद्ध लोगों ने बताया कि बादल फटने की यह घटनाएं पहले नहीं होती थी। जंगल कटे, धरती नंगी हो गई, मिट्टी का स्खलन बढा, प्राकृतिक छलनी हुई तो अब यह प्रकोप होने लगे। (10)"**

लेखक प्रकृति के चीरहरण से क्षुब्ध है। विकास के नाम पर प्रकृति के साथ हो रहे खिलवाड़ की चुभन ही उपन्यास लेखन की प्रेरणा रही है। लेखक ने स्वयं अपनी आंखों से प्रकृति के इस भयंकर विनाश को देखा था यही कारण है कि उपन्यासकार का चित्रण अत्यंत सजीव और मर्मस्पर्शी है। उपन्यासकार ने यह दिखाया है कि प्रकृति ने करोड़ों सालों में एक अनुशासन और नियंत्रण की व्यवस्था बनाई थी जिसे हमने यह मानकर बिगाड़ दिया कि हम इसका विकल्प बना सकते हैं। दुर्भाग्य की बात यह है कि प्रकृति का यह नया संतुलन हमारे जीवन के संतुलन को बिगाड़ रहा है। मनुष्य जितनी जल्दी इस बात को समझ जाएगा उतना ही अच्छा होगा अन्यथा हम सभी जानते हैं कि प्रकृति जब अपना बदला लेती है तो मनुष्य का उस पर कोई वश नहीं चलता।

अभिमन्यु अनत मॉरीशस के उपन्यास सम्राट माने जाते हैं उनका उपन्यास 'एक उम्मीद और' पर्यावरण विमर्श को एक नए दृष्टिकोण से देखता है। उपन्यास का नायक एक अजन्मा बच्चा है जो मां के गर्भ में आठ माह बता चुका है। वह अजन्मा बच्चा ईश्वर की शक्ति से अपने अतीत को देखता है और ईश्वर उसे अतीत से सीख लेकर आने वाले जीवन में अच्छे कर्म करने की प्रेरणा देता है। यह उपन्यास पुनर्जन्म की अवधारणा पर आधारित है। लेखक ने प्राकृतिक प्रदूषण पर विस्तार से चिंतन किया है तथा साथ ही साथ प्रदूषण की समस्या को सुलझाने पर भी विचार किया है। 'एक उम्मीद और' उपन्यास का शीर्षक यही कहता है कि अभी भी हालात सुधारे जा सकते हैं अभी लेखक में उम्मीद बाकी है। इस उपन्यास का उद्देश्य लोगों को पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रेरित करना है। एक ओर मनुष्य और मनुष्य के बीच बढ़ती खाई को दिखाया है वहीं शहरीकरण से नष्ट होती प्रकृति की सुंदरता पर प्रकाश डालता है।

रत्नेश्वर का उपन्यास 'रेखना मेरी जान' ग्लोबल वार्मिंग जैसे अछूते विषय पर लिखा गया है। हम इस बात से इंकार नहीं कर सकते हैं कि ग्लोबल वॉर्मिंग सहित तमाम छोटी–बड़ी समस्याएं मनुष्य की ही देन है। लेखक ने इस उपन्यास में यही दिखाया है कि मार्च और मई के बीच बांग्लादेश में जो भयंकर आंधी चलती है उसे ही काल बैसाखी कहा जाता है। यही काल बैसाखी बांग्लादेश में वार्मिंग के रूप में तब्दील हो जाती है। बढ़ते हुए समुद्री जलस्तर के कारण बांग्लादेश डूबने की कगार पर पहुंच जाता है। बांग्लादेश में उथल–पुथल मच जाती है। वह तहस–नहस हो जाता है। भारत भी इससे बच नहीं पाता इसके कई तटवर्ती इलाके जलमग्न हो जाते हैं। मुंबई और कोलकाता के कई निचले इलाके डूबने को हो जाते हैं। बांग्लादेश के लाचार निवासी भारत में कूच करने को मजबूर हो जाते हैं और भारत और बांग्लादेश की दीवारों को जो कंटीली बाडों के रूप में अवस्थित है, तोड़ने को भी मजबूर हो जाते हैं। यह लेखक का एक शोधपरक उपन्यास है। लेखक इस उपन्यास के माध्यम से यही चेतावनी देना चाहता है कि यदि नॉर्थ पोल के ग्लेशियरों का बड़ा हिस्सा पिघल जाएगा तो ऐसे में कई देश समुद्र में समाहित होने के कगार में होंगे। रत्नेश्वर ने लिखा है –

**"(11) आज सुबह के अखबारों में यह चर्चा सुर्खियों में थी कि अब बांग्लादेश के पास बहुत कम समय बचा है। इस बीच अधिकांश देशों ने बांग्लादेशियों को वीजा देना बंद कर दिया है। हवाई जहाज भी बंद हो गया है।.... भारत का कहना था कि वह एक करोड़ बांग्लादेशियों को यहां पनाह दे सकता है पर सारे बांग्लादेशियों को यहां जगह देना संभव नहीं है। बांग्लादेश ने इस मुद्दे को विश्व मंच पर उठा रखा था। बांग्लादेशियों को उम्मीद थी कि उन्हें भारत में प्रवेश की इजाजत मिल जाएगी और इसलिए वहां हिंदी सीखने और बोलने का प्रचलन भी बढ़ गया था। (11)"**

रत्नेश्वर ने इस बात का ख्याल रखा कि ग्लोबल वार्मिंग की भयावहता पर बात कहते हुए कहीं उपन्यास नीरज न हो जाए इसलिए सुमोना और फरीद की प्रेमकथा भी पाठकों के समक्ष रखा है।

उपन्यासकार ने दिखाया है कि प्राकृतिक आपदा से जूझते जूझते जब सुमोना और फरीद भारत–बांग्लादेश की सीमा पर पहुंचते हैं तो वहां फरीद भारत की एक पलटन की गोली का शिकार हो जाता है। यहां लेखक ने एक छोटे से देश का चित्रण किया है लेकिन जब पूरी पृथ्वी या कोई बड़ा देश इसकी चपेट में आ जाएगा तो हम कल्पना कर सकते हैं कि क्या हो सकता है। यह बेहद कसा हुआ और लीक से हटकर विषय पर एक शानदार उपन्यास कहा जा सकता है। ग्लोबल वार्मिंग के भयंकर प्रभावों पर हिंदी में लिखा यह पहला उपन्यास माना जा सकता है। बढ़ते तापमान, साल–दर–साल बदलते मौसम और जलवायु परिवर्तन से आम आदमी ही नहीं वरन वैज्ञानिक भी परेशान है। ग्लोबल वार्मिंग से आज सभी परिचित हैं। ग्लोबल वार्मिंग के कारण प्रकृति में बदलाव आ रहा है। कही भारी बारिश है तो कहीं सूखा, कहीं लूं तो कहीं ठंडा, कहीं बर्फ की चट्टाने टूट रहीं हैं तो कहीं समुद्र जल में बढ़ोत्तरी हो रही है। यदि वर्तमान गति से पर्यावरण प्रदूषण जारी रहा तो मुंबई, न्यूयॉर्क, पेरिस, लंदन, मालदीप, हॉलैंड और बांग्लादेश जैसे देशों के अधिकांश भूखंड समुद्र में जल मग्न हो सकते हैं। ग्लोबल वार्मिंग से फसल चक्र भी अनियमित हो जाएगा। इससे कृषि उत्पादकता भी प्रभावित होगी। रत्नेश्वर का यह उपन्यास एक बेहद गंभीर विषय को उठाता है और पाठकों को उसकी भयावहता से परिचित भी कराता है। पिछले दिनों हिंदी के एक समर्थक पत्रकार विकास कुमार झा का उपन्यास सामने आया 'वर्षावन की रूपकथा'। यह उपन्यास कर्नाटक के शिमोगा जिले के तीर्थहल्ली तालुका में सघन वर्षावन के बीच बसे उस अगुम्बे ग्राम की कथा है जहां की प्राकृतिक सुंदरता और निश्चल सरल जीवन से प्रभावित होकर प्रसिद्ध निर्देशक आर. के. नारायण द्वारा लिखित मालगुडी डेज के कई एपिसोड फिल्माए थे। उपन्यास पूरी तरह तो पर्यावरण पर ही आधारित नहीं है लेकिन उपन्यास में ऐसे अनेक स्थल है जहां पर्यावरण जैसी ज्वलंत समस्या के प्रति लेखक की चिंता दृष्टिगोचर होती है। लेखक ने इस उपन्यास में अगुंबे वर्षावन और उसके प्राकृतिक सौंदर्य को उजागर तो किया है लेकिन साथ ही साथ मध्य–दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका, एशिया तथा आस्ट्रेलिया के उत्तर–पूर्वी हिस्सों में पाए जाने वाले विभिन्न वर्षा वनों की महत्वपूर्ण जानकारी देते हुए अनेक बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा अपने स्वार्थ के लिए प्रकृति के साथ की जा रही छेड़छाड़ और प्राकृतिक दोहन पर भी प्रकाश डाला है। उपन्यास में दिखाया गया है कि 'खेमका कंपनी' द्वारा मैंगनीज प्राप्त करने के लिए पहाड़ों की खुदाई की जा रही है। गांव वाले पर्यावरण संरक्षण और पहाड़ों को बचाना चाहते हैं। अतः उनके द्वारा कंपनी का विरोध किया जाता है। अवकाश प्राप्त फॉरेस्ट अफसर कहता है

–

''(12) यह जंगल घाटी हमारे ताबीज हैं। आज चेरापूंजी सरीख जलघर स्थल का भी गला सूखता रहता है क्योंकि चूना पत्थर, कोयला और चट्टानों के लालच में लगातार खुदाई से वहां के बहुतेरे पहाड़ खोखले हो चुके हैं। जंगल बर्बाद हो चुका है पर हम अपने इलाके में ऐसा न होने देंगे। यह उपन्यास अपने खास विषय और अलग लेखन शैली के कारण पाठकों में अत्यंत लोकप्रिय हुआ है। यह उपन्यास ग्लोबल वार्मिंग के बीच एक खूबसूरत प्रेम कहानी भी कहता है। यह उपन्यास न केवल जलवायु परिवर्तन के प्रति चिंता जताता है बल्कि पर्यावरण के प्रति लोगों में जागरूकता भी पैदा करता है। कुसुम कुमार का उपन्यास 'मीठी नीम' वृक्षारोपण के आंदोलन पर केंद्रित है उपन्यास की पात्र ओमना वन और पेड़–पौधों से गहरा जुड़ाव रखती है। वह पर्यावरण को लेकर काफी संवेदनशील है। ओमना अशिक्षित है लेकिन प्रकृति से प्रेम आश्चर्यचकित करता है । ओमना वृक्षों से इतना प्यार करती है कि वृक्षों को छोड़कर अपने बेटों के साथ नहीं जाती। उपन्यास के अंत में उसकी बेटी भी प्रतिज्ञा लेती है कि वह जहां रहेगी, वृक्षों की रक्षा करेगी। अगर हम सभी इस संकल्प को अपने जीवन में उतार ले तो पर्यावरण के प्रदूषण की समस्या का समाधान आसानी से हो सकता है। 'मीठी नीम' शीर्षक भी नीम जैसे कड़वे वृक्ष की महत्ता बताने के लिए ही दिया गया है। भालचंद्र का उपन्यास 'प्रार्थना में पहाड़' हो या महुआ माझी का 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास हो, यह दोनों उपन्यास आदिवासियों के जीवन पर आधारित हैं पर इनकी पृष्ठभूमि पर्यावरण ही है। भालचंद्र जोशी ने अपने जीवन का एक बड़ा हिस्सा जंगल और आदिवासियों के बीच जिया है। उपन्यास के केंद्र में मध्यप्रदेश का भिताडा नामक लगभग 200 लोगों की आबादी वाले एक गांव का चित्रण है। उपन्यासकार ने दिखाया है एक शराब फैक्ट्री का विषाक्त रासायनिक अपशिष्ट एक निश्चित तिथि को प्रतिवर्ष एक नदी में छोड़ा जाता है। उस तिथि के बाद बारिश होती है और वह जहरीला रसायन प्रवाह में बहकर दूर चला जाता है। लेकिन इस वर्ष बारिश नहीं होती और जल विषाक्त हो जाता है। नदी पर निर्भर जीव जंतुओं और भिताडा के निवासी उस विषाक्त जल को पीते हैं और मृत्यु की गोद में चले जाते हैं। फैक्ट्री का मालिक, नेतागण, प्रशासन सभी समस्याओं से आंख मूंदे रहते हैं। वहां के निवासी जब समझ जाते हैं कि नदी का जल विषाक्त हो चुका है तब वह प्यासे मरने को मजबूर हो जाते हैं। हमें यह समझना होगा कि पीने का पानी यदि इसी तरह विषाक्त होता जाएगा तो पेयजल अपने आने वाली पीढ़ियों को नसीब कैसे होगा? भारत आज भी जल संकट की समस्या का समाधान कर रहा है ऐसे में यदि उपलब्ध जल को भी हमने विषाक्त बना दिया तो यह हमारी मूर्खता ही कहलाएगी। इस उपन्यास में दिखाया गया है कि अरबपति फैक्ट्री के मालिक को लोगों की प्यास से कुछ लेना–देना नहीं है। वह नदी के साथ खिलवाड़ करते हुए अगले प्रोजेक्ट की योजना में व्यस्त हैं। यह छोटा सा गांव किसी रासायनिक दायरे में नहीं आता। वहां की जनता किसी मतदाता सूची में शामिल नहीं है इसीलिए प्रशासन के लिए भी उनके जीवन का कोई मूल्य नहीं है।

महुआ माजी के उपन्यास 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' में भी दिखाया गया है कि प्रकृति के लगातार दोहन से किस प्रकार मरंग गोड़ा नीलकंठ हो गया है। वहां के जंगल, वृक्ष, नदियाँ सभी यूरेनियम के कारण प्रदूषित हो गए हैं। महुआ माजी ने दिखाया है कि यूरेनियम खदानों से निकली पीली धूल वहां के लोगों को बीमार कर रही है। वहां विचित्र बच्चों का जन्म हो रहा है। किसी का सिर असामान्य रूप से बड़ा है गाय बकरियों के सर सड़ गल कर गिरने लगे हैं। विकास के नाम पर कैसे लोगों के जीवन में जहर घोला जा रहा है। लेखक हमें आने वाले खतरों से सावधान करना चाहता है। प्रकृति से छेड़छाड़ कैसे मनुष्य के जीवन को नरकीय बना देती है, इन खतरों की ओर सभी का ध्यान आकर्षित करना चाहता है। यूरेनियम खदानों से निकलने वाले विकिरण और प्रदूषण के दुष्परिणामों का बड़ा भयानक चित्र उपन्यास में वर्णित है। आदिवासी विमर्श में इस उपन्यास पर विस्तार से चर्चा की गई है। यह उपन्यास इस बात का स्पष्ट उदाहरण है कि प्रकृति पर विजय पाकर मनुष्य को ज्यादा खुश होने की जरूरत नहीं है उसकी हर जीत हमसे अपना बदला लेती है। अलका सरावगी का उपन्यास 'एक ब्रेक के बाद' में यही दिखाया गया है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियां औद्योगिक विकास की आड़ में प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कर रही है। तीसरी दुनिया के देश बहूराष्ट्रीय कंपनियों के लिए कच्चा माल उपलब्ध कराने की मंडियाँ है या कचरे के डंपिंग स्टेशन। ग्लोबल वार्मिंग की चिंता अब तीसरी दुनिया के लोगों को भी सताने लगी है। तीसरी दुनिया की गरीबी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए वरदान है। कार्बन क्रेडिट की खरीद फरोख्त करके वहां पाप बेचा जा रहा है। लेखिका ने अपनी बात दो पात्रों के माध्यम से पाठकों के सामने रखी है पहला के. वी. शंकर अय्यर और दूसरा गुरु चरण दास। शंकर अय्यर घोर अहंनिष्ठ है तो दूसरी तरफ गुरु चरण सघन स्वप्नजीवी हैं। के. वी. जैसे साहब इन कंपनियों के वफादार एजेंट है जो जानते हैं कि हवा में एक टन कार्बन डाइऑक्साइड कम करने से एक क्रेडिट मिलता है जिसे विदेश में दस से तीस यूरो में बेचा जा सकता है। के. वी. कार्बन जमा करने के लिए कंपनी खोलते हैं – कार्बोवेज सिस्टम्स इंक। लेखिका दिखाती है कि ऐसी कंपनियां एन.जी.ओ. के साथ गठबंधन कर लेती हैं। यह एन.जी.ओ. बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए इको फ्रेंडली नकाब की तरह काम करते हैं। के. वी. कहते हैं –

**''(13) भई आप फैक्ट्रियां बंद मत कीजिए, बेशक हवा में कार्बन छोड़ते रहिए। बस जैसे आप स्टील फैक्ट्री के लिए लोहा खरीदते हैं वैसे ही कार्बन क्रेडिट खरीद लीजिए। पूरी धरती का आसमान तो एक ही है, आप कहीं पर हवा पानी बिगाडिये, पर कहीं और की हवा पानी सुधार दीजिए। दिक्कत क्या है? (13)''**

उपन्यास का पात्र गुरुचरण इन सभी सच्चाईयों से परिचित है वह सुनहरे परदे के पीछे छिपी इन भयानक सच्चाई से पर्दा भी उठाता है। वह जानता है कि उद्योग जगत की इन करतूतों को केवल नैतिकता की दुहाई देकर रोका नहीं जा सकता बल्कि आम आदमी का भी आगे आना जरूरी है। वह के. वी. का प्रशंसक बन कर दोगली नीतियों को जानता है। वह कहता है –

**''(14) मैं इस धरती पर अपना छोटा ही सही लेकिन स्वर्ग बना सकूंगा। हम जहां चलेंगे वहां खुशबुएँ रह जाएंगी। हम जहां बहेंगे वहां हमारे प्रवाह का स्वर गूंजेगा। हम अपने आसपास के वृक्षों, हवाओं, पानी और सारे लोगों की सारी वेदना समेट लेंगे। (14)''**

गुरुचरण का सपना पूरा नहीं हो पाता है और उसकी अकाल मृत्यु हो जाती है। प्रकृति बार–बार हमें चेतावनी दे रही है पर हम उसे अनसुना कर रहे हैं। लेखिका ने एक फेंटेसी के माध्यम से लोगों को आगाह किया है। वे लिखती हैं –

**''(15) अचानक संसार में प्रकृति के पांचों तत्व मिट्टी, जल, आग, आकाश और हवा गड़बड़ा गए। दुनिया के सबसे ताकतवर देश में पेड़–पौधे मरने लगे, इस तरह जैसे धरती के अंदर किसी ने जहर घोल दिया हो। हवा में ऑक्सीजन की कमी हो गई कि लोगों के लिए सांस खींचना दुष्कर होने लगा। सारा धरती का पानी सूखने लगा जैसे रेगिस्तान की रेत। (15)''**

यह फेंटेसी मन में भय पैदा करती है।

अतः हम कह सकते हैं कि समकालीन हिंदी उपन्यासकारों ने

बड़ी संजीदगी के साथ प्रदर्शित किया है कि आज प्रकृति पर तरह तरह के खतरे मंडरा रहे हैं। प्रकृति और पर्यावरण की सुरक्षा का सवाल एक बड़ा सवाल है। प्रकृति जो हमें जीने के लिए स्वच्छ वायु, पीने के लिए जल और खाने के लिए कंदमूल उपलब्ध कराती है, आज खतरे में है। पर्यावरण के नियमों का पालन हमें किसी के डर से नहीं बल्कि दिल से करना होगा। नदियां प्रदूषित हैं, शहरों की हवा प्रदूषित है। हवा में सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड जैसी जहरीली गैसें घुल चुकी है। प्रकृति जो बिना स्वार्थ के हमें सब कुछ देती है लेकिन हम स्वार्थ में अंधे प्राकृतिक संसाधनों को धन के स्रोत के रूप में देखते हैं। अनेक राज्यों में अवैध फैक्ट्रियों आज भी चल रही है। तापमान का बदलता स्वरूप प्रकृति के साथ किए गए निर्मम व्यवहार का ही सूचक है। ग्लोबल वार्मिंग, भूमिकंपन, बाढ़, तूफान, सूखा, अतिवृष्टि और अल्पवृष्टि प्रकृति द्वारा मनुष्य को दी जाने वाली चेतावनियां है। समकालीन उपन्यासकारों ने भी मानव को यही समझाने का प्रयत्न किया है कि अगर हम नहीं जागे तो प्राकृतिक आपदाएं कब मानव सभ्यता को विलुप्त कर देंगी यह पता ही नहीं चल पाएगा। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'कुटज' में लिखा है –

**"(16) यह धरती मेरी माता है और मैं इसका पुत्र हूं इसलिए मैं सदैव इसका सम्मान करता हूं और मेरी धरती माता के प्रति नतमस्तक हूं। (16)"**

समकालीन हिंदी उपन्यासकारों ने भी प्रकृति और पर्यावरण के प्रति अपने नवीन दृष्टिकोण और सजगता को प्रकट किया है।

**संदर्भ ग्रंथ**


1. हिंदी समय, ई पत्रिका, प्रष्ठ 17, अंक–17
2. समकालीन भारत की सामाजिक समस्याएँ, डॉ० सुरेशचंद्र जोरा, प्र० 96
3. कुइयॉजन, नासिरा शर्मा, पृ० 3
4. कुइयॉजन, नासिरा शर्मा, पृ० 62
5. कुइयॉजन, नासिरा शर्मा, पृ० 42
6. नासिरा शर्मा एक मूल्यांकन, एम फिरोज अहमद, पृ० 154
7. कुइयॉजन उपन्यास की भूमिका से, नासिरा शर्मा
8. लक्ष्मणरेखा उपन्यास की भूमिका से, भगवती शरण मिश्र
9. लक्ष्मणरेखा, भगवती शरण मिश्र पृ० 66
10. वृंदा उपन्यास की भूमिका से, शान्ता कुमार
11. रेखना मेरी जान, रत्नेश्वर, पृ० 64
12. वर्षावन कि रूप कथा, विकास कुमार झा, पृ० 86
13. एक ब्रेक के बाद, अलका सरावगी, पृ० 82
14. एक ब्रेक के बाद, अलका सरावगी, पृ० 42
15. एक ब्रेक के बाद, अलका सरावगी, पृ० 103
16. कुटज, हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ० 32